भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष 12, अंक-8-9 बुधवार, 25 अक्टू. ' 89	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-10.00 प्रति अंक : 1.00

अखंड दीवाली.....

हर साल की तरह आनंद, उल्लास, उमंग, आशा के जगमगाते दीप लेकर दीवाली नजदीक आ रही है.....सर्वविदित है कि इस दिन भगवान राम रावण पर विजय प्राप्त करके अयोध्या वापस लौटे थे.....मानव को सर्वप्रथम तो अपने ही अन्तर लगातार परेशान करने वाली रावण वृत्तियों पर विजय प्राप्त करनी है.....अपने ही अन्दर की काली अमावस्या की अंधेरी रात में उजाला प्राप्त करने का साधन ढूंढना है.....।

मनुष्य देह मिलना खूब अमूल्य है। अनन्त जन्मों का पुण्य जब इकट्ठा होता है, उसके फलस्वरूप मानव शरीर की प्राप्ति होती है। मनुष्य देह मिल भी जाये पर उसमें 'सत्संग' मिलना खूब कठिन होता है। सत्संग भी मिल जाये, पर, 'सच्चा संत' जो आन्तरिक गटर जैसी वृत्तियों को जड़ से निर्मूल करके प्रभु के साथ संबंध दृढ़ करा सके—वह मिलना खूब दुर्लभ....प्रभुधारक ऐसा संत मिल भी जाये, पर उसे तत्त्व से पहचान कर पल-पल उसकी ही स्मृति करके उसकी अनुवृत्ति में रहना खूब कठिन...पाण्डवों को भी साक्षात् कृष्ण परमात्मा प्राप्त हुए थे, पर तब भी जुआ खेलते समय कृष्ण परमात्मा को याद नहीं किया....यह हमने 'महाभारत' में देखा।

मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी की बातों में लिखा है—**'करोड़ों काम बिगाड़कर भी एक मोक्ष सुधार लेना।'** पर आज जीवमात्र इसके विपरीत कर रहा है। कैसी अजीब बात है कि जीव इस लोक के सभी कार्य कर रहा है, पर उस परलोक के लिये—जहां उसे यह शरीर छोड़कर जाना है इसकी तनिक भी उसे चिन्ता नहीं। जगत के क्षणिक भोग विलास में ही सच्चा आनन्द मानकर आनंदित हो रहा है। भौतिक वस्तुओं की उपलब्धि को ही जीवन की उन्नति-प्रगति मान बैठा है...परन्तु स्वयं की ही आत्मा की उन्नति के लिये—आध्यात्मिक प्रगति के लिये उसका कोई प्रयत्न नहीं....सो, आध्यात्मिक व व्यावहारिक पथ दिखाने के लिये महर्षि वशिष्ठ, गुरु सांदिपनी, रामकृष्ण परमहंस जैसे पवित्र संत की गोद जरूरी ही नहीं—बल्कि अत्यंत आवश्यक है....

जो गोद ढूँढने के लिये औरों को साधना करनी है, हमें तो समर्थ गुरु की वह गोद मुफ्त में मिली है। पूर्व के कोई बलिष्ठ संस्कार या तो इन गुणातीत स्वरूपों की केवल करुणा.. जो हमारे जीवन में नित्य नवीन दीवाली की रोशनी प्रगट करना चाहते हैं। प्रश्न यह उठता है कि इतनी बड़ी भव्य प्राप्ति के बाद हमें क्या करना बाकी रहा जिससे हमारी आत्मा का दीप कभी भी, कैसे भी संजोगों में निरन्तर जलता ही रहे, कभी भी धुंधला न पड़े... उसका उपाय भी हमारे प्राण प्रभु प.पू. काकाजी ने बताया—**सच्चे संत को पहचान कर उसके पास दो हाथ जोड़कर खड़े रहना....वह जितना कहे उतना करना** तो हमारे जीवन में रोज दीवाली व आत्मा का शाश्वत आनन्द हम अनुभव कर पायेंगे। तो आओ, हम स्वयं के बल से नहीं, बल्कि प्रभु का बल लेकर....केवल 'महिमा भरी दृष्टि' का एक अनोखा दीप प्रज्जवलित करें जो आत्मा के अंधकार को नष्ट करके सूर्य समान हमारे हृदय में सदैव जलता रहे.....

× × × ×

मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानन्दस्वामी

एक बार महेमदाबाद के हरिभक्तों ने महाराज को हाथ जोड़कर विनती करी—महाराज ! हमारे गांव में वेदांतियों का खूब प्रभाव है। वे किसी को सत्संगी बनने नहीं देते। ढोंग से 'अहं ब्रह्माऽस्मि' बताकर सभी को बहकाते हैं। इसलिये आप किसी पढ़े-लिखे शास्त्री या पुराणी को वहां भेजो जो उन्हें समझा-बुझाकर हटा पाये, जिससे कि हमारे आड़े आते बंद हो। यह सुनकर महाराज ने पढ़े-लिखे साधुओं को बुलाकर महेमदाबाद जाने की आज्ञा दी, परन्तु कोई तैयार नहीं हुआ। तब स्वामी की ओर महाराज की दृष्टि गई व कहाः 'अरे **हमारे अनादि के शास्त्री तो यहीं बैठे हैं।** उठो स्वामी ! आप इन हरिभक्तों के साथ महेमदाबाद जाओ और वेदांतियों को पराजित करो।' स्वामी उठे व महाराज को हाथ जोड़कर कहा : 'महाराज ! मैं यह कैसे कर सकूँगा?' तब महाराज बोले : **'आप नहीं कर सकोगे तब तो कौन कर सकेगा? इसलिये जाओ, यह काम आपसे ही हो सकेगा।'** स्वामी अपने चार साधुओं का मंडल लेकर मेहमदाबाद के लिये निकल पड़े।

महेमदाबाद के मन्दिर में स्वामी रुके। गांव के वेदांतियों को खबर मिली की स्वामिनारायण के शास्त्री चर्चा करके उन्हें हराने आये हैं। सब वेदांती इकट्ठे होकर मजाक उड़ाते-उड़ाते मन्दिर आये। स्वामी ने स्वयं उठकर वेदांतियों को सम्मान दिया। और आसन पर बिठाया। सब पंडित स्वामिश्री की ब्रह्म के प्रकाश से देदीप्यमान भव्य मुखमुद्रा देखकर ही ठण्डे पड़ गये थे। पर तब भी शास्त्र ज्ञान के घमंड के कारण स्वयं की कायरता छुपाकर उन्होंने चर्चा करने का निर्णय लिया। इतने में तो स्वामिश्री ने ही पंडितों को संबोधित करते हुए कहा :

'आजकल विद्वानों केवल शब्दों के ज्ञान से ही 'अहं ब्रह्माऽस्मि' बोला करते हैं, परन्तु न तो उन्हें ब्रह्मभाव की खबर है—न ही परब्रह्म परमात्मा के स्वरूप का ज्ञान ! सच्चे ब्रह्मभाव को तो शुकदेवजी ने पाया था। उन्हें स्त्री-पुरुष का भेद ही नहीं था। उनके पिता भगवान वेदव्यास ने जब उन्हें बुलाया, तो वृक्ष में प्रवेश करके उन्होंने जवाब दिया था। इस

प्रकार जो सच्चा ब्रह्मस्वरूप हो वह तो भगवान वेदव्यास व शुकदेव की भांति व्यापक रूप से भी रह सकता है। सो ब्रह्मज्ञान का मिथ्या अभिमान छोड़ कर ब्रह्मरूप होने के लिये 'दास' भाव ग्रहण करना चाहिये। फिर भी आप सब पंडित यदि सचमुच ब्रह्मरूप हुए हो, तो आओ इस जड़ खम्बे में प्रवेश करो।'

स्वामिश्री का सतत वाणी प्रवाह सुनकर पंडित तो सन्न हो गये। पंडितों को लगा भी कि यहां शास्त्र चर्चा नहीं हो पायेगी, परन्तु कसौटी नोक पर आ गई, सो उसमें से पार उतरना भी जरूरी था। सबके अंतर धड़क रहे थे। इतने में तो स्वामी की बुलन्द आवाज दुबारा गूंजी–

''जब तक संसार में आसक्ति है, जब तक एक फूटी कौड़ी के लिये भी धोखाधड़ी करनी पड़ती है और अनेकों के साथ मित्रता या शत्रुभाव रखना पड़ता है, पंडिताई का प्रचण्ड अभिमान है, स्वाद में लोलुपता है, रूप में इन्द्रियां खींची जाती हैं तब तक केवल 'अहं ब्रह्माऽस्मि' कहने से ब्रह्मरूप नहीं हो पाते। जो आत्मारूप हो गया हो उसे तो मृगजल रूपी विषयों कभी स्पर्श भी नहीं कर सकते। ऐसी स्थिति जब हो जायेगी तब कहना नहीं पड़ेगा कि 'मैं ब्रह्म हूँ'। जगत को स्वयं ही पता चल जायेगा। शुकदेवजी व जड़भरत किसी को कहने नहीं गये थे, पर जगत ने उन्हें पहचान लिया था।''

स्वामिश्री की भारी व गंभीर वाणी अर्जुन के गांडिव के समान अनेक निशान चीरती हुई अक्षरब्रह्म के नाद की भांति पंडितों के अन्तर में बैठ गई। पंडितों का झूठा मिथ्या अभिमान चूर-चूर हो गया था। वे तो अब तक यही सोचते थे कि स्वामिनारायण के साधु यानि भिक्षा मांगकर खाने वाले अनपढ़ बाबा ! वह सब तो विचार में पड़ गये थे कि स्वामिश्री की वाणी को किन शब्दों से, शास्त्र के किस प्रश्न से रोंके? यहां तो ब्राह्मीस्थिति की, साधुता की ही बात हो रही थी। उन लोगों को यूँ सोच में छोड़कर स्वामिश्री फिर बोले : 'विद्वानों ! हमें समझना चाहिये कि खाली घड़ा ही आवाज करता है। जिसमें अपूर्णता होगी, उसमें अहंकार तो होगा ही। इसलिये जब तक 'अहं ब्रह्माऽस्मि' ये शब्द बोलने पड़ते हैं, तब तक अपूर्णता ही है व तब तक शब्दमात्र की ही उपासना कर रहे हैं यूँ मानना। गीता में भी कहा है :

'जो स्वयं के सुख-दुःख के विचार के साथ दूसरों के सुख-दुःख का विचार करता है, सब जगह जिसकी ऐसी समभाव की दृष्टि है वह ही हे अर्जुन ! परम योगी है।'

ऐसे आप हुए हो? सबके सुख-दुःख में भाग लेने की वृत्ति रहती है? इसलिये मिथ्या ज्ञान का अभिमान छोड़कर आज परब्रह्म परमात्मा स्वामिनारायण प्रगट हुए हैं उनका आश्रय लेकर ब्रह्मरूप हो जाओ। वरना तुम ब्रह्मरूप कैसे हो सकते हो? अनादि ब्रह्म तो मैं हूँ। और आठ-आठ आवरणों सहित अनंत ब्रह्मांडों को मैंने धार रखा है....। इतना बोलते ही स्वामिश्री के शरीर से अनेक सूर्यों को भी निस्तेज कर दे ऐसा दिव्य शीतल प्रकाश निकलने लगा। वेदांतीओं इस प्रकाश से चकाचौंध हो गये और मंदिर भी हिलने लगा। सबको डर लगने लगा कि मंदिर कहीं गिर न पड़े। इतने में स्वामिश्री ने हँसते हुए कहा : 'डरो नहीं। यह मंदिर तो गिरेगा नहीं, पर अगर आप सब ब्रह्म हो तो इस प्रकाश को बुझा दो।' बेचारे पंडित.....! वे तो यह कहाँ कर पाते? उन सबने हाथ जोड़कर प्रार्थना करी–'स्वामी ! आप ही इस प्रकाश को समेट दो।' तुरन्त वह सारा प्रकाश स्वामिश्री की

देह में समा गया। वेदांतीओं स्वामिश्री के चरणों में नतमस्तक हो गये। कई पंडितों ने भगवान स्वामिनारायण का आशीष लिया। सबको प्रतीति भी हुई कि स्वामिनारायण सम्प्रदाय में अद्‌भुत विभूतियाँ है।

यह कोई चमत्कार नहीं था परन्तु ढोंग पर सच्चाई की विजय थी....असत्य पर सत्य की विजय थी। इससे भी अधिक स्वामिश्री ने महाराज की आज्ञा में बुद्धि से परे का विश्वास रखकर हरेक के लिये आदर्श रख दिया कि जो भी भगवत्स्वरूप विभूति के वचन में विश्वास रखकर जीने की कोशिश मात्र भी करेगा उसे स्वयं महाराज सहायभूत होंगे। तो, शरद्‌पूर्णिमा अर्थात्...मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी के धरती पर अवतरित होने का महामंगलकारी दिन हमने मनाया.....महाराज के पास पाँच सौ परमहंसों थे.....सभी अलग-अलग गुणों के सिद्ध थे, परन्तु गुणातीतानन्दस्वामी पर महाराज का जो भरोसा था वह अनन्य था। तो हम सब प्रार्थना करें कि जैसा भरोसा महाराज का स्वामिश्री ने पाया था व महाराज उन पर अपना हकदावा रख सकते थे, वैसा ही हकदावा प्रत्यक्ष गुणातीत स्वरूपों हम पर कर सकें व हम उनके भरोसे के पात्र बने ! **–क्रमशः**

× × × ×

स्वामी की —बातें

133. जिसे महाराज व यह साधु जैसे हैं वैसे पहचाने जायें उसे समझना-करना कुछ बाकी रहता ही नहीं। तब पूछा कि– महाराज व यह साधु जिसने पहचाने हो उसकी कैसी समझदारी होती है? तब स्वामी के उत्तर दिया–'यो वेत्ति युगपत्सर्वं प्रत्यक्षेण सदा स्वतः !' यूं श्रुति बोलकर कहा कि ऐसी समझदारी हो तब भगवान व बड़े संत को पहचाना कहा जाता है। पर तब फिर किसी ने पूछा–ऐसी समझदारी हो तो गलत आचरण कैसे हो? तब स्वामी बोले कि जिसकी ऐसी समझदारी हो उसको तो गलत संकल्प भी नहीं उठ पाये, तो गलत आचरण तो होगा ही कैसे? जिसे जितना गलत आचरण होता है उसे उतना अज्ञान है व जितना अज्ञान है उतना कुसंग हो रहा है।

प्र-3,15

134. जीवों को मोक्षप्राप्ति हेतु महाराज ने अनंत प्रकार की बातें प्रवर्तित की हैं, किन्तु इनमें चार बातें प्रमुख हैं–
एक–महाराज की उपासना,
दूसरी–महाराज की आज्ञा,
तीसरी– एकांतिक साधु के साथ प्रीति और
चौथी– भगवदी भक्त के साथ सुहृदभाव।
ये चार बातें प्रमुख हैं–जीव का जीवन है– इनको तो छोड़ना ही नहीं।.....

प्र-3,17

135. एक हरिभक्त ने प्रश्न पूछा–'स्वामी ! हृदय में ठण्डक (शान्ति) कैसे हो? तब स्वामी बोले कि जैसे भगवान की ओर देखते रहते हैं, वैसे संत की ओर देखते रहेंगे तब हृदय ठण्डा होगा। जैसे गाय का बछड़ा गाय के सारे शरीर में दूध ढूंढता रहे, पर उसे दूध का सुख आयेगा नहीं। वह तो जब गाय के आंचल से मुँह लायेगा

तब ही दूध का सुख आयेगा। वैसे ही सारा सत्संग महाराज का शरीर है, पर बड़े एकांतिक संत द्वारा तो महाराज अखंड रहे हैं। उनसे जुड़ जायें तो महाराज का सुख आता है।

प्र-3,20

136. ....बड़े पुरुष की कृपा दृष्टि हम पर कब हो? यदि धर्म में दृढ़ हो व आत्मा परमात्मा का अति दृढ़ ज्ञान हो। तथा पंच विषय में अतिशय दृढ़ वैराग्य हो व पुरुषोत्तम भगवान की माहात्म्य ज्ञान सहित अनन्य भक्ति हो। उसी पर बड़े संत की कृपा दृष्टि होती है, परन्तु देहाभिमानी पर कृपा दृष्टि नहीं होती और उस पर जो कृपा दृष्टि दिखाई जैसी पड़ती है, वह आखिरकार रहेगी ही नहीं उसमें कोई शंका नहीं।

प्र-3,25

138. सत्संग जैसा है वैसा तो जाना नहीं जाये। अगर कोई जान ले तो सत्संग करे नहीं और कोई करे भी तो जैसा सत्संग है वैसा करा नहीं जाये। और यदि होवे, तो संभल नहीं पाये—या तो वह बहक जाये या पागल हो जाये। ऐसा सत्संग कौन संभाल सकता है? तो जिसे महाराज व इस बड़े संत के प्रति माहात्म्य ज्ञान सहित प्रीति हो वही संभाल सकता है, पर दूसरे किसी से नहीं संभल सकता.....

प्र-3,26

139. जल में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब देखकर मछली प्रसन्न होती है व सोचती है कि यह भी हमारे जैसी ही कोई मछली है। पर जैसा चन्द्रमा है, उसका मंडल है व जैसा उसका तेज है, जैसा उसका ऐश्वर्य व सामर्थ्य है वह मछली जान नहीं सकती। उसी प्रकार समुद्र में कोई बड़ा जहाज चला जा रहा हो उसे देखकर बड़ा मगरमच्छ यही सोचता है कि यह भी कोई हमारे जैसा ही मगरमच्छ चला जा रहा है, पर जैसा वह जहाज है व इससे समुद्र तैर सकते हैं और वह तो करोड़ों रुपये का माल ले-ला जा सकता है—यूं उसे नहीं जान सकता। यह तो उदाहरण है, कहने का तात्पर्य यह है कि जैसे महाराज व उनके संत है व जैसे उनका स्वरूप, गुण, स्वभाव, ऐश्वर्य, सामर्थ्य है उसे पहचाना नहीं जा सकता। जैसे मछली चन्द्र को, मगरमच्छ जहाज को अपने समान ही समझते हैं, वैसे लोग महाराज व संतो को अपने समान मनुष्य जैसा ही समझते हैं, पर जैसे वे हैं वैसे नहीं पहचानते.....कि अनंत कोटि जीवों को ब्रह्मरूप करके अक्षरधाम ले जाये ऐसे समर्थ है। यही अज्ञान है।

प्र-3,29

140. सत्संग में यूं बात होती है कि जीव ब्रह्मरूप हो जाता है। तब किसी ने पूछा कि यूं बात तो होती है, पर जीव ब्रह्मरूप क्यों नहीं होता? फिर स्वामी बोले कि—सत्पुरुष (संत) के साथ प्रीति से जी नहीं जोड़ दिया और यदि जी जोड़ भी दिया हो, पर उनका विश्वास नहीं आता होगा।....फिर कहा कि विश्वास भी हो पर संत के पास खुले (निष्कपट) नहीं रह पाते होंगे। यदि संत के पास खुले रहेंगे तो जीव ब्रह्मरूप हुए बिना रहेगा भी नहीं, यह अटल सिद्धान्त है।

प्र-3,33

× × ×

ब्रह्मप्रवाह

नये वर्ष के शुभाशीष—

सर्वदेशीय ज्ञान से ही सही विकास होता है। तो, सर्वदेशीय सद्गुरु का ही सेवन करना। वरना जो बीजरूप स्वभाव परमहंसों को भी रह गये थे वह नड़ेंगे।

इसलिये 'साधु का ज्ञान' अनिवार्य है। सो, साधुता सीखनी ही पड़े और तब ही गुण से परे हो सकते हैं। अथवा तो प्रभु व संत की सतत् स्मृति रखें व उसकी अनुवृत्ति (मर्जी) के मुताबिक वर्तन करें, परन्तु वह कठिन है।

अनुग्रह तो बहुत प्रकार के होते हैं जैसे प्रसन्नता भी कई प्रकार की होती है।

परन्तु, विशिष्ट प्रकार का अनुग्रह—अक्षरब्रह्म ने घनश्यामानंदस्वामी के लिये प्रायश्चित भी स्वयं करके करा था व अमाप बल दिया था व वड़ताल (की) महंताई वापस दी थी—और अ.म.मू. गोपालानंदस्वामी में दिव्यभाव कराया था। ऐसा जोग (संबंध) प.पू. बापा ने तो दे दिया है—जिस मौज का मूल्य नहीं हो सकता—परन्तु हमें लाभ लेना नहीं आता।

तो अब वैसी सूझ पड़ जाये व सुरुचि प्रगटे वही सभी बड़े स्वरूपों विशिष्ट अनुग्रहरूप से बक्षीश देवें यही अभ्यर्थना सह—

आपके ही,

दादुकाका के हेतपूर्वक

जयश्री स्वामिनारायण !

27-8-'84

NEW YEAR'S UNIQUE AWARENESS BLESSINGS

Kindly accept our—Gunatit Samaj's—New Year heartiest compliments and greetings for Your inner peace, happiness and prosperity by the infinite love, grace, compassion and blessings of HIS SUPREME DIVINTY B.S. YOGIJI MAHARAJ.

All Sadgurus also gracefully share in your repentance prayer for your Spiritual enlightenment and perfection.

Your sincere offering at the lotus feet of the 'Divine Master'—of joyous forgiveness, towards those who have directly or indirectly annoyed you or scolded and rebuked you or shown any sorts of illfeelings or apathy or a version towards you, will now result into an overflowing outburst of devotional feelings, real happiness and eternal bliss in your life—thus actually experiencing living 'Akshardham'—the kingdom of God on earth—here and right now.

May the supreme Incarntion Lord Swaminarayan bless us all for such a divine vision and achievement..... in india and abroad and everywhere.

With love and Blessings

Yours DADUKAKA'S jay swaminarayan

(To all)

25.10.'84

व्रतोत्सवसूची

1.	दि.	25.10.89	बुधवार	एकादशी, व्रत
2.	दि.	26.10.89	गुरुवार	धनतेरस
3.	दि.	29.10.89	रविवार	दीपावली, लक्ष्मी पूजन
4.	दि.	30.10.89	सोमवार	अशोकविहार मन्दिर में अन्नकूट उत्सव
5.	दि.	31.10.89	मंगलवार	भैयादूज
6.	दि.	4.11.89	शनिवार	लाभपंचमी
7.	दि.	9.11.89	गुरुवार	एकादशी, व्रत

PUBLISHED BY SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY,
A 103, Ashokvihar-III, Delhi-110 052. (India) Tel.: 7229327, 7119525
Printed at R.P. Printers, Shahadra, Delhi-110 032